इंजेक्शन महामारी भी फैला सकते हैं

डॉ. अनंत फड़के

गुजरात के मोडासा कस्बे में हेपेटाइटिस-बी की महामारी फैलने से 53 व्यक्तियों की मौत हो गई और सैकड़ों बीमार हो गए। यह भारत में हेपेटाइटिस-बी की सबसे बड़ी महामारी थी। मोडासा के कुछ डॉक्टरों द्वारा डिस्पोज़ेबल यानी प्लास्टिक के इंजेक्शनों को बिना संक्रमण-मुक्त (स्टेरेलाइज़) किए इस्तेमाल करने के कारण यह महामारी फैली।

हेपेटाइटिस-बी के विषाणु एड्स के विषाणुओं की तरह असुरक्षित यौन सम्बंधों से, दूषित रक्त से और इंजेक्शन की सुइयों के माध्यम से फैलते हैं। ऐसे कुछ समाज विरोधी लोग होते हैं जो उपयोग में लाई गई सुइयों और सिरिंजों को कचरे में से इकट्ठा करके बिना संक्रमण-मुक्त किए नए पैकिंग में भरकर बेचने का धंधा करते हैं। ऐसे लोगों से सिरिंज खरीदने वाले डॉक्टरों को भी समाज विरोधी कहना ही उचित होगा। ऐसे समाज विरोधी व्यापारियों और डॉक्टरों की सांठ-गांठ के कारण संक्रमित सुइयां दोबारा इस्तेमाल की गईं। इनमें से कुछ सुइयां हेपेटाइटिस-बी के मरीजों के उपचार में उपयोग की गई थीं और विषाणुओं से संक्रमित हो चुकी थीं। इसी कारण पूरे कस्बे में हेपेटाइटिस-बी महामारी की तरह फैला।

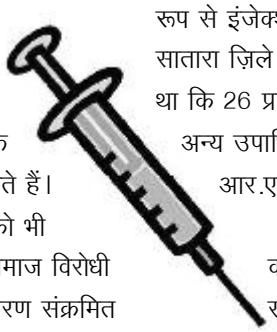

निम्नलिखित कई कारणों से इस प्रकार की महामारी कहीं भी फैल सकती है।

1) मरीजों के उपचार के लिए इंजेक्शन का उपयोग अनावश्यक रूप से किया जाता है। आम बीमारियों के केवल पांच प्रतिशत मरीज़ों को इंजेक्शन की आवश्यकता होती है। किंतु 'साथी-सेहत' संस्था द्वारा महाराष्ट्र के 10 ज़िलों के 461 मरीजों से प्राप्त की गई जानकारी के आधार पर यह पाया गया कि इनमें से 62 प्रतिशत को इंजेक्शन लगाए गए थे। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत क्रमशः 73 और 40 पाया गया। इंजेक्शन का उपयोग इस प्रकार धड़ल्ले से करने वाले डॉक्टरों में उन फर्ज़ी डॉक्टरों की संख्या अधिक होती है जिन्होंने डॉक्टरी शिक्षा प्राप्त ही नहीं की है। ऐसे तथाकथित डॉक्टर सुइयों को संक्रमण-मुक्त करने के बारे में लापरवाह होते हैं और इनके द्वारा अनावश्यक रूप से लगाए जाने वाले इंजेक्शनों के माध्यम से हेपेटाइटिस-बी का संक्रमण होने की संभावना अधिक होती है। यह ज़रूरी है कि सबसे पहले इन पर कार्रवाई की जाए। किंतु यह भी सही है कि एम.बी.बी.एस. की उपाधि प्राप्त डॉक्टर भी अनावश्यक रूप से इंजेक्शन का उपयोग करते हैं। महाराष्ट्र के सातारा ज़िले में मेरे द्वारा किए गए अध्ययन में पाया गया था कि 26 प्रतिशत एम.बी.बी.एस. डॉक्टर, 28 प्रतिशत अन्य उपाधि धारक डॉक्टर और 42 प्रतिशत आर.एम.पी. अनावश्यक इंजेक्शन लगाते हैं।

यदि इंजेक्शन के इस अनावश्यक उपयोग को रोकना है तो शासन और डॉक्टरों के संगठनों को जनमानस में इस बात के प्रति जागरूकता फैलानी होगी कि इंजेक्शन हर बीमारी का रामबाण इलाज नहीं हैं। इसके लिए रेडियो, टीवी और अखबारों में विज्ञापन छपवाने होंगे। सामाजिक संगठन भी इसके प्रति जागरूकता बढ़ाने का काम कर सकते हैं। महाराष्ट्र में कार्यरत लोक विज्ञान संगठन ने इस विषय पर एक सचित्र पोस्टर प्रदर्शनी बनाई है जो इस तरह की जागरूकता फैलाने में उपयोगी साबित हो सकती है।

दूसरी बात यह है कि विशेषज्ञ डॉक्टर मरीज़ की जांच करने के लिए फीस लेते हैं किंतु जनरल प्रेक्टिस करने वाले डॉक्टर जांच करने की अलग से कोई फीस नहीं लेते। किंतु इंजेक्शन लगवाने के लिए 20-25 रूपए ज़्यादा देने में मरीज़ों को आपत्ति नही होती। कई बार इस लालच के कारण भी जनरल प्रेक्टिस करने वाले डॉक्टर अनावश्यक रूप से इंजेक्शन का इस्तेमाल करते हैं। यदि

जनरल प्रेक्टिस करने वाले डॉक्टरों को जांच करने की फीस अलग से मिलने की प्रथा शुरू की जाए तो अनावश्यक रूप से इंजेक्शन लगाने का प्रचलन कुछ कम हो सकता है।

2) यदि डॉक्टर यह चाहते हैं कि उन्हें संक्रमण-मुक्त इंजेक्शन मिलें तो उन्हें अपने स्टाफ को अच्छी तरह समझाना होगा कि कांच की सिरिंज और उसके साथ लगने वाली सुई को 20 मिनिट तक पानी में उबालना ज़रूरी है। चूंकि उबालने पर होने वाला खर्च डॉक्टर की जेब से होता है, कर्मचारियों को इस पर अमल करने में कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए। किंतु अपने अस्पताल में केवल संक्रमण-मुक्त सिरिंज और सुइयों का ही इस्तेमाल हो, ऐसी ज़िम्मेदारी कई डॉक्टर नहीं लेना चाहते। इसी कारण प्लास्टिक से बने 'डिस्पोज़ेबल' इंजेक्शनों का चलन शुरू हुआ। कायदे से इन्हें एक बार काम में लेने पर नष्ट कर देना ज़रूरी होता है। किंतु अपने देश में उपयोग में लाई गई डिस्पोज़ेबल सिरिंजों को पैक करके दोबारा बेचे जाने की संभावना होने के कारण कांच से बनी सिरिंजों को और उनके साथ लगने वाली सुइयों को उबाल कर काम में लेना ही सबसे सुरक्षित उपाय है, यह गुजरात में फैली महामारी ने स्पष्ट कर दिया है।

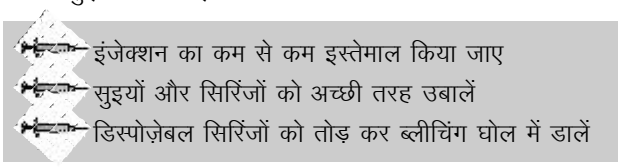

इसमें कुछ कठिनाइयां भी होती हैं। कई स्थानों के पानी में क्षार होने के कारण बार-बार उबालने पर सिरिंजों के अंदर क्षार जमा हो जाता है और फिर उन्हें इस्तेमाल करने में कठिनाई आती है। किंतु इस कठिनाई का हल यही है कि क्षार की तहें जमकर बेकार हो जाने तक उनका इस्तेमाल किया जाए।

यह पाया गया है कि प्लास्टिक की सिरिंजों को भी उबाल कर दोबारा काम में लिया जा सकता है। जहां चाह है वहां राह है। कुछ डॉक्टर यह कहते हैं कि कांच की सिरिंज महंगी होती हैं, उनके टूटने का डर होता है। इसलिए उन्हें इस्तेमाल करना महंगा सौदा होता है। किंतु डॉ. विनय कुलकर्णी और मैंने कुछ वर्षों पहले यह ठोस रूप से साबित कर दिया था कि कांच की सिरिंजों और उनकी सुइयों को बार-बार उबालने और अन्य खर्चों को मिला कर भी वे सस्ती पड़ती हैं। एक और मुद्दा यह है कि प्लास्टिक के कचरे की खाद नहीं बन सकती। यदि उसे जलाया जाए तो बहुत अधिक ज़हरीली गैसें बनती हैं जो पर्यावरण को हानि पहुंचाती हैं।

सार यह है कि डिस्पोज़ेबल सिरिंजें डॉक्टरों को सुविधाजनक लगती हों तो भी कांच की सिरिंजों को खुद उबाल कर काम में लेना ही सबसे सस्ता और सुरक्षित तरीका है। जो डॉक्टर अभी भी कांच की सिरिंजों का इस्तेमाल कर रहे हैं वे बधाई के पात्र हैं।

3) डिस्पोज़ेबल सिरिंजों को इस्तेमाल के बाद तोड़कर ब्लीचिंग घोल से भरी बाल्टी में डालना चाहिए ताकि एच.आई.वी. और हेपेटाइटिस-बी के विषाणु मर जाएं। किंतु अधिकांश डॉक्टर इस सरल और सस्ती सावधानी को भी नहीं बरतते हैं। इसके कारण उन व्यक्तियों के लिए भी खतरा पैदा हो जाता है जो इस कचरे को उठाते-फेंकते हैं।

यह प्रस्ताव ज़रूर आएगा कि ऐसी महामारी से बचने के लिए हेपेटाइटिस-बी का टीका लगवा लिया जाए। किंतु यह ध्यान में रखना चाहिए कि ऐसी महामारी हेपेटाइटिस-बी के विषाणु की नई किस्मों से भी फैल सकती है। ऐसा होने पर हमेशा काम में लाया जाने वाला टीका उसकी रोकथाम नहीं कर सकेगा। अतः ऐसी महामारियों से बचने का सबसे उचित उपाय यही है कि इंजेक्शन का कम से कम इस्तेमाल किया जाए, सुइयों और सिरिंजों को अच्छी तरह उबालने की सावधानी डॉक्टरों के द्वारा बरती जाए और डिस्पोज़ेबल सिरिंजों का इस्तेमाल करना ही हो तो काम हो जाने पर उन्हें तोड़ कर ब्लीचिंग घोल में डाला जाए। ***(स्रोत फीचर्स)***